अमृतलाल नागर

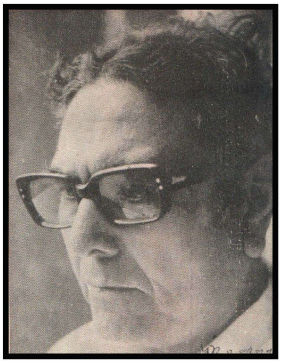

अमृतलाल नागर का जन्म आगरा जिला के गोकुलपुरा में 17 अगस्त 1916 को हुआ । गोकुलपुरा उनका ननिहाल था । वे मूलत: गुजराती थे । उनके पितामह पंडित शिवराम नागर 1895 ई० में लखनऊवासी हो गए थे । जब नागर जी 19 वर्ष के थे तभी उनके पिता का देहांत हो गया । अर्थोपार्जन की विवशता के कारण उनकी विधिवत शिक्षा हाई स्कूल तक ही हुई, किंतु निरंतर स्वाध्याय द्वारा साहित्य, इतिहास, पुराण, पुरातत्व, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान आदि विषयों पर तथा हिंदी, अंग्रेजी, मराठी, बाँग्ला आदि भाषाओं पर अधिकार हुआ । एक छोटी-सी नौकरी के बाद कुछ समय तक मुक्त लेखन एवं हास्यरस के प्रसिद्ध पत्र 'चकल्लस' के संपादन के अनंतर 1940 से 1947 तक कोल्हापुर, मुंबई एवं चेन्नई के फिल्म क्षेत्र में लेखन कार्य किया । 1953 से 1956 तक वे आकाशवाणी, लखनऊ में ड्रामा प्रोड्यूसर के पद पर रहे । तदुपरांत वे स्वतंत्र लेखन करते रहे और हिंदी साहित्य में अपनी स्थाई पहचान बनाई ।

हिंदी साहित्य में नागर जी की पहचान एक श्रेष्ठ कथाकार के रूप में तो है ही, साथ ही नाटक, रिपोर्ताज, निबंध, संस्मरण, अनुवाद, बाल साहित्य आदि के क्षेत्र में भी उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है । उनकी महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं :- **उपन्यास** - 'महाकाल', 'सेठ बाँकेलाल', 'बूँद और समुद्र', 'सुहाग के नूपुर', 'अमृत और विष', 'मानस का हंस' आदि । **कहानी एवं रेखाचित्र** - 'वाटिका', 'अवशेष', 'नवाबी मसनद', 'तुलाराम शास्त्री', 'आदमी नहीं, नहीं', 'एक दिल हजार दास्ताँ', 'पाचवाँ दस्ता और सात अन्य कहानियाँ' आदि । **रिपोर्ताज एवं संस्मरण** - 'गदर के फूल', 'ये कोठेवालियाँ' आदि । **अनुवाद** - 'बिसाती', 'प्रेम की प्यास', 'आँखों देखा गदर' आदि । **निबंध** - 'फिल्म क्षेत्रे रंग क्षेत्रे' । **बाल साहित्य** - 'नटखट चाची', 'निंदिया आजा', 'बजरंगी नौरंगी', 'बाल महाभारत' आदि । नागर जी को 'बूँद और समुद्र' पर काशी नागरी प्रचारिणी सभा का बटुक प्रसाद पुरस्कार, 'सुहाग के नूपुर' पर उत्तरप्रदेश शासन का प्रेमचंद पुरस्कार, 'अमृत और विष' पर साहित्य अकादमी पुरस्कार एवं सोवियत लैंड नेहरू पुरस्कार मिला ।

नागर जी किसी दृष्टि या वाद को जस का तस नहीं लेते । अपने व्यक्तिगत और सामाजिक अनुभवों की कसौटी पर विचारों को कसते हैं । उनकी कसौटी मूलत: भारतीय जन की कसौटी है । अंधश्रद्धा को काटने के लिए वे तर्कों का प्रयोग अवश्य करते हैं, किंतु तर्कों के कारण अनुभवों को नहीं झुठलाते । नागर जी किस्सागोई में माहिर हैं । उनकी जिंदादिली और विनोदवृत्ति उनकी कृतियों को कभी विषादपूर्ण नहीं बनने देती ।

प्रस्तुत निबंध 'भारतीय चित्रपट : मूक से सवाक् फिल्मों तक' उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह 'फिल्म क्षेत्रे-रंग क्षेत्रे' से लिया गया है । इस निबंध में नागर जी ने हिंदी सिनेमा के मूक से सवाक् होने तक की यात्रा को दिलचस्प और विश्वसनीय तरीके से पाठकों के सामने रखा है ।

भारतीय चित्रपट : मूक फिल्मों से सवाक् फिल्मों तक

उन्नीसवीं और बीसवीं शताब्दियों ने दुनिया को ऐसे-ऐसे करिश्मे दिखलाए कि लोग बस दाँतों तले उँगली दबा-दबा के ही रह गए । आँखें अचंभे से फट-फट पड़ीं । गपोड़ियों की गप्पों का बाजार ठप पड़ गया क्योंकि वे लोग जो झूठ बयान करते थे वह देर सबेर साइंस का करिश्मा बनकर सच साबित हो जाता था । गैस की रोशनी, बिजली का चमत्कार, टेलीग्राम, टेलीफोन के जादू, रेल, मोटर वगैरह-वगैरह जो पहले किसी ने देखे सुने तक न थे, जिंदगी की असलियत बनकर हमारे सामने आ गए थे । सिनेमा का आविष्कार भी उन्नीसवीं सदी के बीतते न बीतते जादू बनकर जमाने के लिए सिर पर चढ़कर बोलने लगा । 6 जुलाई सन् 1896 का दिन हिंदोस्तान और खासकर बंबई के लिए एक अनोखा दिन था जब पहली बार भारत में सिनेमा दिखलाया गया । अखबारों में विज्ञापन निकला कि 'जिंदा तिलस्मात् देखिए फोटुएँ आपको चलती-फिरती-दौड़ती दिखलाई पड़ेंगी । टिकट एक रुपिया ।' इस विज्ञापन ने बंबई की जनता में तहलका मचा दिया । बंबई में आज जहाँ प्रिंस ऑफ वेल्स म्यूजियम की इमारत और उसके पास ही चौराहे पर काले घोड़े की मूर्ति खड़ी है उसके आस ही पास किसी जगह उस जमाने का वाट्सन होटल था । वहीं पर भारत का पहला सिने-प्रदर्शन हुआ । फ्रांस के ल्युमीयेर ब्रदर्स के एजेंट उन्नीसवीं सदी के इस जिंदा तिलस्मात को दिखलाने के लिए भारत में लाए थे । फ्रांस में एक साल पहले इस तमाशे का श्रीगणेश हो चुका था । अमेरिका में कुछ ही महीनों पहले इस तमाशे को दिखलाया गया था । लेकिन उस समय सिनेमा आज की तरह किसी कहानी पर आधारित नहीं होता था । छोटी-छोटी तस्वीरें थीं किसी में समुद्र स्नान के दृश्य दिखलाए गए और किसी में कारखाने से छूटते हुए मजदूरों का दृश्य, ऐसे ही जीवन की हल्की-फुल्की झाँकियाँ देखकर लोगबाग बड़े खुश हो जाते थे । उन्हें सचमुच इस बात पर बड़ा ही अचंभा हो जाया करता था कि तस्वीरें भी चलती-फिरतीं और नाचती हैं । उनमें तरह-तरह के करिश्मे दिखलाए जा सकते हैं ।

लेकिन यह तो शुरुआत थी जब बंबई की जनता को फिल्म का चस्का लग गया तब उस दिशा में कामकाज भी शुरू हो गया । दो एक विलायती कंपनियाँ अपने प्रोजेक्टर और कैमरे वहाँ ले आईं और 1897 में पहली बार बंबई की जनता को रुपहले पर्दे पर कुछ भारतीय दृश्य देखने को मिले । बंबई की नारली पूर्णिमा यानी रक्षाबंधन का त्योहार, दिल्ली के लाल किले और अशोक की लाट वगैरह के चंद दृश्यों की झलक के साथ-साथ लखनऊ में इमामबाड़े भी रुपहले पर्दे पर चमके । बंबई के अलावा कलकत्ते में भी मिस्टर स्टीवेंसन नाम के एक अंग्रेज सज्जन ने स्टार

थियेटर की स्थापना करके फिल्मी धंधे को बढ़ाना शुरू किया । उस जमाने में इसे वायोस्कोप के नाम से पुकारा जाता था । बंबई, कलकत्ते की इन विदेशी कंपनियों ने भारत के अन्य नगरों में भी चलती-फिरती तस्वीरों के तमाशे दिखाने आरंभ कर दिए थे । ये कंपनियाँ अपने प्रोजेक्टर और फिल्में लेकर विभिन्न नगरों में जातीं और विज्ञापनों के सहारे साइंस के इस नए करिश्मे का प्रदर्शन किया करती थीं ।

भारत में इस नए काम को शुरू करनेवाले पहले व्यक्ति एक सावे दादा थे । दुर्भाग्यवश उनका असली नाम मैं भूल गया हूँ । मैं सन् 1941 में जब स्वर्गीय मास्टर विनायक की एक फिल्म 'संगम' लिखने के लिए कोल्हापुर गया था तब शालिनी स्टूडियोज में उनके दर्शन प्राप्त करने का सौभाग्य मुझे मिला था । मझोले कद के गोरे चिट्टे, दुबली-पतली कायावाले सावे दादा को देखकर कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि ये अपने जमाने के बहुत बड़े कैमरामैन और भारतीय फिल्म व्यवसाय के आदि पुरुष रहे होंगे । मुझे तो अब याद नहीं कि सावे दादा कोल्हापुर ही के निवासी थे या बंबई, पुणे के पर बंबइया मार्का हिंदी वे मजे में बोल लेते थे । उन्होंने ल्युमीयेर ब्रदर्स के प्रोजेक्टर, फोटो डेवलप करने की मशीन या मशीनें खरीद कर भारत में इस धंधे का एक तरह से राष्ट्रीयकरण कर लिया था । जहाँ तक मेरी जानकारी है सावे दादा इंग्लैंड जाकर एक कैमरा भी लाए थे और शायद इंग्लैंड और फ्रांस के सिनेमेटोग्राफी कला विशेषज्ञों से भेंट करके उन्होंने भारत में इस उद्योग को स्थापित करने के लिए महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ भी प्राप्त की थीं । शालिनी सिनेटोन के एक कमरे में लकड़ी जड़ी कुर्सी पर टांग पर टांग चढ़ाए बैठे हुए चश्माधारी सावे दादा ने अपनी हल्की-फुल्की नकसुरी आवाज में मुझे उन प्रारंभिक अंग्रेज सिनेमेटोग्राफरों के नाम भी बातों के प्रसंग में ही बतलाए थे । सावे दादा ने छोटी-मोटी बहुत फिल्में बनाईं । भारत के प्रसिद्ध गणितज्ञ और कैंब्रिज विश्वविद्यालय के प्रथम भारतीय छात्र सर आर० पी० परांजपे जो सन् 1936-37 के लगभग लखनऊ विश्वविद्यालय के वाइस चांसलर भी हुए थे, उनके स्वागतोत्सव पर एक डाक्यूमेंट्री फिल्म बनाई थी । इसी तरह लोकमान्य तिलक, गोखले आदि देश के मान्य नेताओं पर भी फिल्में बनाई थीं । मुझे यह भी याद पड़ता है कि भारतीय फिल्म उद्योग के जनक माने जाने वाले दादा साहब फालके द्वारा बनाई गई फीचर फिल्म 'हरिश्चंद्र' से पहले भी एक फीचर फिल्म बनी थी उसका नाम शायद 'भक्त पुंडलीक' था । दुर्भाग्यवश मैं उसके निर्माता का नाम भूल चुका हूँ (इनका नाम था दादा साहब तोरणे-संपादक) । हो सकता है वह फिल्म दादा साहब फालके ने ही बनाई हो । जो भी हो इतिहास ने दादा साहब फालके को ही भारतीय फिल्म उद्योग का जनक माना साबे दादा को नहीं । इसका कारण शायद यह भी हो सकता है कि दादा साहब फालके ने केवल एक ही नहीं वरन् कई फीचर फिल्म एक के बाद एक बनाई और इस प्रकार उन्होंने ही इस उद्योग की नींव जमाई । सावे दादा ने छोटी-मोटी डाक्यूमेंट्री फिल्में तो बहुत बनाई और समय को देखते हुए पैसा भी अच्छा ही कमाया और यदि पहली फीचर फिल्म 'भक्त पुंडलीक' उन्हीं की बनाई सिद्ध हो तो भी उनकी अपेक्षा दादा साहब फालके को ही

भारतीय फिल्मों का जनक मानना मेरी समझ में उचित है । भारत सरकार ने भी फिल्म के सर्वोच्च पुरस्कार को दादा साहब फालके पुरस्कार कहके ही इतिहास की वंदना की है ।

सन् 1940 में मेरे मित्र श्री किशोर साहू की पहली फिल्म 'बहूरानी' का उद्घाटन दादा साहब फालके के कर-कमलों द्वारा ही संपन्न हुआ था । बहूरानी के अर्थपति मेरे दूसरे मित्र स्वर्गीय द्वारकादास डागा थे । बड़े पढ़े-लिखे सुरुचिपूर्ण, साहित्यिक व्यक्ति थे । उन्हीं के कारण बहूरानी के निर्माण काल में फिल्मी दुनिया से मेरा संबंध जुड़ा । दादा साहब फालके से मुझे दो-तीन बार भेंट करने के सुअवसर प्राप्त हुए थे । बड़े दबंग, जोश में आकर बड़े झपाटे से बोलने लगते थे । वे स्वयं को बात-बात में महत्त्व देने से तो न चूकते थे परंतु उनमें अच्छाई यह थी कि वे नई पीढ़ी के महत्त्व को एकदम नकारते न थे । मुझे अच्छी तरह याद है कि मेरे सामने उन्होंने श्री शांताराम और श्री देवकी बोस की प्रशंसा की थी । मूक चित्रपटों के सुख्यात डायरेक्टर आनंदप्रसाद कपूर, जाल मर्चेंट आदि-आदि बड़े नामी स्टारों को रजत पट पर लाने वाले बनारस के स्वर्गीय भगवती प्रसाद मिश्र की प्रशंसा भी मैंने उनके मुख से सुनी थी । दादा साहब फालके अपनी फिल्मों के निर्माता, निर्देशक, लेखक, कैमरामैन, प्रोसेसिंग-डेवलपिंग करने वाले, प्रचारक, वितरक सब कुछ एक साथ थे । मुझे फिल्म व्यवसाय में रहते हुए उनकी सन् उन्नीस सौ तेरह में बनाई हुई 'राजा हरिश्चंद्र' फिल्म देखने का अवसर भी प्राप्त हुआ था । उसमें स्त्रियों का पार्ट भी पुरुषों ने ही किया था । श्री फीरोज रंगूनवाला ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि दादा साहब फालके ने पहले तो वेश्या वर्ग की कुछ स्त्रियों को अपनी फिल्म में काम करने के लिए राजी कर लिया था लेकिन बाद में कैमरा के सामने आने पर वे शरमा गईं । कुछ एक को तो उनके संरक्षक दल्लाल भी भगाकर ले गए और इस प्रकार राजा हरिश्चंद्र की रानी मास्टर साडुंके को ही बनना पड़ा । खैर, राजा हरिश्चंद्र के तीन ही महीने बाद उन्होंने 'मोहिनी भस्मासुर' नामक दूसरा चित्र दिया । उनका तीसरा चित्र 'लंकादहन' भारत की पहिली बाक्स-ऑफिस हिट कही जा सकती है, अपने जमाने में खूब चली थी ।

बंबई की तरह ही कलकत्ते में एक पारसी व्यवसायी जे० एफ० मादन जिन्होंने मादन थियेटर नामक सुप्रसिद्ध संस्था की स्थापना भी की थी, सन् 1917 में एलफिंस्टन बाइस्कोप कंपनी नामक फिल्म संस्था चलाई और दादा साहब फालके की तरह ही वे भी फीचर फिल्में बनाने लगे । इस तरह सन् 1913 से सन् 1920 तक फिल्मों में क्रमशः पौराणिक कथानक ही अधिकतर हमारे सामने पेश हुए । तीसरे दशक की सबसे महान् फिल्मी हस्ती बाबूराव पेंटर थे । साँवला रंग, दुबला-पतला शरीर, आँखों पर चश्मा, लंबी दाढ़ीयुक्त श्री बाबूराव पेंटर का व्यक्तित्व बहुत ही सौम्य और शालीन था । आज के सुप्रसिद्ध निर्माता-निर्देशक श्री व्ही० शांताराम, स्वर्गीय बाबूराव पेंढारकर, भालजी पेंढारकर तथा स्वर्गीय मास्टर विनायक आदि अनेक जानी-मानी फिल्मी हस्तियों के वे गुरु थे । उन्होंने काफी कम फिल्में बनाईं, उनकी एक मराठी फिल्म 'सावकार पाश' (साहूकार का फंदा) मैंने भी देखी थी । वह अपने जमाने की बड़ी ही प्रसिद्ध फीचर फिल्म थी ।

इसी दशक के लगभग अंतिम काल में कई नामी फिल्म स्टार हुए, जिल्लो, जुबैदा, मास्टर विट्ठल, ई० बिलीमोरिया, डी० बिलोमारिया, गौहर, सुलोचना, माधुरी, जाल मर्चेंट, अर्मलीन, पृथ्वीराज कपूर आदि स्टारों का जमाना यही था । और इसी दशक के अंत में सन् 1930 के आस-पास बंबई की इंपीरियल फिल्म कंपनी ने भारत की 'सौ टक्का, नाचती गाती, बोलती, फीलम' आलम आरा का निर्माण किया । मादन की बोलती फिल्म शीरीं-फरहाद भी इसी समय के आस-पास आई । फिल्मी दुनिया में नया युग आ गया ।

♦ ♦ ♦

अभ्यास

पाठ के साथ

1. उन्नीसवीं और बीसवीं शती ने दुनिया को कई करिश्मे दिखाए । लेखक ने किस करिश्मे का वर्णन विस्तार से किया है ?
2. भारतीय चित्रपट में मूक से सवाक् फिल्मों तक के इतिहास को रेखांकित करते हुए दादा साहब फालके का महत्त्व बताइए ।
3. सावे दादा कौन थे ? भारतीय सिनेमा में उनके योगदान को पाठ के माध्यम से समझाइए ।
4. लेखक ने सावे दादा की तुलना में दादा साहब फालके को क्यों भारतीय सिनेमा का जनक माना ? स्पष्ट कीजिए ।
5. भारतीय सिनेमा के विकास में पश्चिमी तकनीक के महत्त्व को रेखांकित कीजिए ।
6. अपने शुरुआती दिनों में सिनेमा आज की तरह किसी कहानी पर आधारित नहीं होते थे, क्यों ?
7. भारत में पहली बार सिनेमा कब और कहाँ दिखाया गया ?
8. सिनेमा दिखलाने के लिए अखबारों में क्या विज्ञापन निकला ? इस विज्ञापन का बम्बई की जनता पर क्या असर हुआ ?
9. 1897 में पहली बार बम्बई की जनता को रुपहले पर्दे पर कुछ भारतीय दृश्य देखने को मिले । उन दृश्यों को लिखें ।
10. कलकत्ते में स्टार थियेटर की स्थापना किसने की ?
11. भारत में फिल्म उद्योग किस तरह स्थापित हुआ ? इसकी स्थापना में किन-किन व्यक्तियों ने योगदान दिया ।
12. पहली फीचर फिल्म कौन थी ?
13. भारत की पहली बॉक्स-ऑफिस हिट फिल्म किसे कहा जाता है ?
14. जे० एफ० मादन का भारतीय फिल्म के विकास में योगदान रेखांकित करें ।

15. शुरुआती दौर की फिल्म को लोग क्या कहते थे ?
16. 'राजा हरिश्चंद्र' फिल्म में स्त्रियों का पार्ट भी पुरुषों ने ही किया था । क्यों ?

पाठ के आस-पास

1. 'दादा साहब फालके' के बारे में जानकारी प्राप्त करें ।
2. प्रारंभिक दौर की फिल्मों की एक क्रमवार सूची बनाएँ ।
3. राजा हरिश्चंद्र की कहानी अपने शिक्षक से पूछें ।
4. आरंभिक दौर की फिल्मों को बनाने में क्या-क्या कठिनाइयाँ रही होंगी ? आप क्या सोचते हैं ?
5. आरंभिक दौर की फिल्मों और आधुनिक दौर की फिल्मों में क्या अंतर पाते हैं ? लिखें ।
6. दादा साहब फालके पुरस्कार अब तक किन लोगों को मिला है । क्रमवार सूची बनाएँ ।

भाषा की बात

1. निम्नलिखित मुहावरों के अर्थ लिखिए –
   दाँतों तले उँगली दबाना, श्रीगणेश होना
2. निम्नलिखित शब्दों का संधि विच्छेद करें –
   संगम, विश्वविद्यालय, स्वागतोत्सव, हरिश्चंद्र
3. निम्नलिखित शब्दों का वाक्य-प्रयोग द्वारा लिंग स्पष्ट कीजिए –
   टेलीग्राम, आँख, सिनेमा, टिकट, होटल, फिल्म, व्यवसाय
4. निम्नलिखित शब्दों के प्रत्यय बताएँ –
   बंबइया, स्वर्गीय अच्छाई, व्यक्तित्व, चश्माधारी
5. निम्नलिखित शब्दों के उपसर्ग बताएँ -
   विज्ञापन, प्रचारक, विनायक, सुप्रसिद्ध, सुख्यात
6. निम्नलिखित वाक्यों से कोष्ठक में दिए गए निर्देश के अनुरूप पद चुनें –
   (क) आँखें अचंभे से फट पड़ीं । (कारक चिह्न)
   (ख) अमेरिका में कुछ ही महीनों पहले इस तमाशे को दिखाया गया था । (कारक चिह्न)
   (ग) सावे दादा ने छोटी-मोटी बहुत फिल्में बनाईं । (विशेषण)
   (घ) दुर्भाग्यवश मैं उसके निर्माता का नाम भूल चुका हूँ । (अर्थ की दृष्टि से वाक्य)
   (ङ) मुझे अच्छी तरह से याद है । (सर्वनाम)
7. निम्नलिखित शब्दों के समानार्थी शब्द लिखें –
   बाजार, करिश्मा, चमत्कार, आविष्कार, जनता, व्यवसाय, खरीदना, प्रारंभ ।

शब्द निधि :

मूक	:	चुप, मौन
सवाक्	:	बोलता हुआ, वाणी युक्त
गपोड़ियों	:	गप्प हाँकने वाले
शताब्दी	:	सौ वर्षों की अवधि (शत्+अब्द+इ)

तिलस्मात	:	जादू, चमत्कार
अचंभा	:	आश्चर्य
विलायती	:	विदेशी
रुपहले पर्दे	:	सिनेमा का पर्दा जिसपर तस्वीरें दिखाई जाती हैं ।
राष्ट्रीयकरण	:	राष्ट्र की संपत्ति बनाना
नकसुरी	:	बोलने में नाक की ध्वनि का ज्यादा प्रभाव
डाक्यूमेंट्री	:	वृत्तचित्र
अर्थपति	:	धनवान
सुरुचिपूर्ण	:	परिष्कृत रुचि से पूर्ण, अच्छी रुचि से पूर्ण
कथानक	:	कथा का ढाँचा